ज्ञानविविधा
कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-2.25
Vol.-2; Issue-4 (Oct.-Dec.) 2025
Page No.- 09-14
©2025 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

डॉ. अनुपम कुमारी
पूर्व शोध छात्रा,
स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग,
मगध विश्वविद्यालय, बोध गया.

Corresponding Author :

डॉ. अनुपम कुमारी
पूर्व शोध छात्रा,
स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग,
मगध विश्वविद्यालय, बोध गया.

वैदिक साहित्य में यज्ञ की प्रासंगिकता

शोध – सार : भारतीय संस्कृति में यज्ञ को विशेष रूप से बहुत महत्व दिया गया है। वैदिक संस्कृति का प्रमुख केंद्र एवं प्रतीक यज्ञ है। जितनी प्रमुखता एवं महत्व यज्ञ को दिया गया है उतना शायद ही वैदिक संस्कृति में किसी और क्रियाविधि को महत्व दिया गया होगा। जितने भी धार्मिक क्रियाकलाप एवं शुभ अशुभ कर्म भारतीय संस्कृति में होती है वह सभी यज्ञ के बिना अधूरी मानी जाती है। मानव के जन्म से लेकर मृत्यु पर्यंत तक जीवन के हर एक मार्ग पर यज्ञ विधान परंपरा जुड़ी रहती है। यह सिर्फ धार्मिक क्रियाकलाप एवं कर्मकांडों तक ही सीमित नहीं है बल्कि सामाजिक दार्शनिक नैतिक एवं सांस्कृतिक चेतना का भी प्रतीक माना जाता है। यज्ञ को सामूहिकता एवं एकता का भी प्रतीक माना जाता है। जो भी व्यक्ति अपने जीवन में सुख एवं शांति को स्थापित करने की इच्छा रखता है वह यज्ञ का परित्याग कभी नहीं करता है। मानव को सरल उदार एवं उदात्त बनाने के वे सभी तत्व इनमें मौजूद हैं जो जगत के कोई अन्य दर्शन में विद्यमान नहीं है। इस तरह से यज्ञ को भारतीय संस्कृति का पिता भी कहा जाता है।

मुख्य शब्दः- वैदिक साहित्य,यज्ञ, ऋग्वेद, यजुर्वेद,सामवेद,अथर्ववेद, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, कल्प सूत्र।

भूमिका : वैदिक साहित्य को सबसे प्राचीन ग्रंथ के रूप में माना जाता है। मनुष्य के जीवन के सभी पक्षों का वर्णन वैदिक साहित्य में प्राप्त होता है। भारतीय संस्कृति का आधार स्तंभ केंद्र वैदिक साहित्य है मानव जीवन से संबंधित जिन सभी आयामों का उल्लेख वैदिक साहित्य में प्राप्त होता है उन सब में सर्वाधिक महत्वपूर्ण यज्ञ अवधारणा है। इस यज्ञ महिमा एवं इसके विशेषता का वर्णन ऋग्वेदीय मंत्रो से लेकर उपनिषदों तक की गई है। जो कुछ भी अग्नि में बहुमूल्य पदार्थ समर्पित किए जाते हैं वह उसका संग्रह ना करके सर्वसाधारण के लाभ एवं उपयोग के लिए वायुमंडल में बिखेर देती है। चरम पुरुषार्थ मोक्ष का कारक यज्ञ को माना गया है। गीता में कहा गया है कि जो मनुष्य यज्ञ कर्म के अतिरिक्त दूसरे कर्मों में संलग्न रहता है वह मानव कर्मों से बंध जाता है। इहलोक तथा परलोक को सिद्ध करने वाला एवं कैवल्य का हेतु यज्ञ ही है। जगत की भलाई

एवं उसके कल्याण हेतु जो आत्म त्याग किया जाता है उसे ही यज्ञ कहते हैं। भारतीय संस्कृति में हिंदुओं का जीवन यज्ञ में है। उनके जीवन की उत्पत्ति यज्ञ से ही शुरु होती है और इसकी अंत्येष्टि भी यज्ञ में ही होती है। अर्थात जो यज्ञ से ही शुरु होकर यज्ञ में ही समाप्त हो जाता है।

वैदिक साहित्य : भारत के सप्त सिंधु प्रदेश में रहने वाले निवासियों की साहित्यिक अभिव्यक्ति जिन भाषा में मौखिक रुप से हुआ वही वैदिक संस्कृत कहा जाता है। भारतीय तात्कालिक समाज की प्रवृत्तियों को जानने में वैदिक साहित्य अत्यंत ही उपयोगी है। धार्मिक विषयों की ओर दृष्टिपात किया जाए तो यह ज्ञात होता है कि यज्ञ देवता भेद एवं उनके स्वभाव आदि का वर्णन वैदिक साहित्य में प्राप्त होता है तो वहीं दूसरी तरफ लौकिक विषयों में सामाजिक स्वरुप मनुष्य की आकांक्षाएं संकट एवं उसका निदान, विवाह, चिकित्सा तथा दान आदि विभिन्न आयामों का वर्णन भी प्राप्त होता है। वैदिक साहित्य का अर्थ है वेद से संबंधी साहित्य समस्त वैदिक संहिताओं का नाम 'वेद' इस पद के साथ समाप्त होता है। वैदिक संहिताओं के अंतर्गत चार संहिताएं हैं- ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद जिसका अर्थ विभिन्न वर्गों के मनुष्यों के लिए अलग-अलग है। इस प्रकार से जानना यह संस्कृत की 'विद ज्ञाने'[1] धातु से उत्पन्न हुई है। वर्तमान समय में वेद शब्द का अर्थ एक उत्कृष्ट श्रेणी के धार्मिक ग्रंथ से लिया जाता है जो भारतीय संस्कृति के प्रमुख केंद्र माने जाते हैं। तथापि इसका प्रारंभ में इतना विस्तृत अर्थ नहीं था। सर्वप्रथम इसका जो पहले अर्थ निकलकर आया वह था 'ज्ञान'इसके बाद 'सर्वश्रेष्ठ ज्ञान' अर्थात जिसका अभिप्राय पवित्र और धार्मिक ज्ञान हो गया। जिसका अभिप्राय आगे चलकर सारे वैदिक वांग्मय में से लिया जाने लगा।[2] आचार्य सायण ने तैत्तिरीय संहिता भाष्य भूमिका में वेद की व्युत्पत्ति इस प्रकार दी है 'इष्टप्राप्त्यनिष्टपरिहार लौकिकमुपायं यो ग्रंथों वेदयति स वेद:'।[3] अर्थात ईष्ट की प्राप्ति एवं अनिष्ट के नाश हेतु जो अलौकिक उपाय को बतलाने वाला ग्रंथ है वह वेद है कतीपय विद्वानों का यह मत है कि जो सभी पदार्थों का ज्ञान करवाता है तथा प्राप्त करवाता है वह वेद है कुछ विद्वानों के अनुसार वेद का अभिप्राय है "विद्यंते ज्ञायन्ते,लभ्यंते वा एभिधर्मादिपुरुषार्था: इति वेद:"।[4] अर्थात जिसके द्वारा धर्म आदि पुरुषार्थ जाने जाते हैं या प्राप्त किए जाते हैं वह वेद कहलाते हैं।

यज्ञ की धार्मिक प्रासंगिकता : ऋग्वेद (10.90) के पुरुष सूक्त में यह बताया गया है कि यह संपूर्ण जगत यज्ञ मय है। इस जगत की उत्पत्ति यज्ञ के द्वारा ही हुई है और यह भी वर्णित किया गया है कि उस ब्रह्मांडीय पुरुष का विभाजन यज्ञ से ही संपन्न होता है। तथा एक नए समाज के निर्माण का उल्लेख भी प्राप्त होता है। इससे यह ज्ञात होता है कि यह सिर्फ धार्मिक कर्मकांडों तक ही सीमित न होकर समाज के संगठन का भी प्रमुख स्तंभ माना जाता था। वैदिक यज्ञ की प्रमुख संकल्पना तीन बिंदुओं पर केंद्रित है –

1. देव पूजन -मित्रों द्वारा देवों की स्तुति करना एवं आहुति देना।
2. संघटना- सामाजिक एकता एवं परस्पर सहकार की भावना।
3. दान- लोक कल्याण एवं जनहित की भावना।

ऋग्वेद में यज्ञ का वर्णन : चारों वेदों के प्रतिनिधि के रुप में यज्ञ में चार ऋत्विक होते हैं। इन सारे ऋत्विजों के कर्तव्य निर्देश का उल्लेख ऋग्वेद में किया गया है।

"ऋचां त्व: पोषमास्ते पुपुष्वान्
गायत्रं त्वो गायति शक्वरीषु।
ब्रह्मा त्वो वदति जातविद्यां
यज्ञस्य मात्रां विमिमीत उ त्व:"[5] (ऋग्010/71/11)

अर्थात यज्ञ में चार प्रकार के ऋत्विक होते हैं। जिन में प्रथम है होता- द्वितीय- उद्गाता, तृतीय- अध्वर्यु, एवं चतुर्थ - ब्रह्मा। ऋग्वेद में सृष्टि का प्रथम धर्म यज्ञ प्रक्रिया को कहा गया है।[6] ऋग्वेद और यजुर्वेद में यज्ञ का उल्लेख करते हुए यह कहा गया है कि वर्ष चक्र रुपी यज्ञ में वसंत ऋतु घी है, ग्रीष्म ऋतु समिधा और शरद ऋतु भाव। वसंत के बाद ग्रीष्म, ग्रीष्म के बाद वर्षा, वर्षा के बाद शरद, और शरद् के बाद बसंत।इस प्रकार से पूरा वर्षचक्र होता है।

"यत् पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।
वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्म: शरद् हवि:"।।[7] (ऋग्010/90/6)

"ऋग्वेद में यज्ञ को धन,आवास,संतान एवं पशुओं की समृद्धि करके कल्याण करने वाला कहा गया है।"[8] "ऋग्वेद के (1/1/4) में यज्ञ को देवताओं तक पहुंचने वाला कहा गया है।"[9]

यजुर्वेद में यज्ञ की अवधारणा : यजुर्वेद कर्मकांड का वेद है। इसमें यज्ञ की विभिन्न विधियां एवं उनमें पाठ्य मंत्रों का संकलन प्राप्त होता है। यज्ञ करने वाले ऋत्विक् को अध्वर्यु कहते हैं।[10] यजुर्वेद के प्रथम अध्याय में यज्ञ को पुरुष के रूप में बतलाया गया है जो सारे विश्व को बसाने वाला, सभी में व्यापक रूप से बसने वाला, तथा पवित्र परम पावन स्वरूप है।[11] यज्ञ से मनुष्य को धर्म ,अर्थ ,पुरुषार्थ ,ऐश्वर्य, यश, वैभव, बौद्धिक क्षमता, सहिष्णुता, उदारता एवं आत्म बल की प्राप्ति होती है।[12] ऋक्, यजु, साम आदि भी इस यज्ञ से प्रकट हुए हैं-

तस्माद् यज्ञात्सर्वहुतऽऋच:सामानि जज्ञिरे।
छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद् यजु: तस्मादजायत।"।[13] (ऋग्0 10.90.9,यजु031.7)

अर्थात् उस सर्वहुत यज्ञ से ऋचाओं एवं साम आदि की उत्पत्ति हुई। उसी से छंद आदि तथा यजु: भी उत्पन्न हुए।यह सर्वहुत यज्ञ जैसे जैसे विकसित होता है, वैसे वैसे सृष्टि का विकास भी होता जाता है।

सामवेद में यज्ञ का उल्लेख : मुख्य रूप से सामवेद को उपासना का वेद कहा जाता है। इसमें सोम अग्नि एवं इंद्रदेव से संबंधित मंत्रों का उल्लेख किया गया है। इन्हीं देवों की स्तुति, प्रार्थना और उपासना की गई है। यज्ञ के समय उद्गाता इन मंत्रों का गान करता है। इस दृष्टिकोण से यजुर्वेद और सामवेद का घनिष्ठ संबंध ज्ञात होता है। गान में जिन मंत्रो का प्रयोग किया जाता है वह ऋचा है इसलिए यह ऋग्वेद आधारभूत है इस प्रकार सामवेद एक ओर ऋग्वेद से और दूसरी ओर यजुर्वेद यज्ञ क्रिया से संबंध है। सोमयाग का महत्व सामवेद में बताया गया है देवताओं को आवाहित् करने के लिए एवं उनकी स्तुति करने के लिए सामवेद का गान उद्गगाता (पुरोहित) के द्वारा किया जाता है। सामवैदिक गान का प्रमुख जो उद्देश्य था वह देवताओं को प्रसन्न कर एकता एवं सामूहिकता की भावना को स्थापित करना था।

अथर्ववेद में यज्ञ का उल्लेख : अथर्ववेद में यज्ञ को संतान सुख की प्राप्ति ,लंबी आयु, शांति की स्थापना एवं रोगों का निवारण करने वाला बताया गया है। यज्ञ को अथर्ववेद में लौकिक जीवन से जोड़ा गया है। अथर्ववेद 11. 5.4 में यह वर्णित है कि "यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म"। अर्थात यज्ञ को सबसे श्रेष्ठ कर्म बताया गया है। अथर्ववेद में यज्ञ में दिए जाने वाले पशु बलि का भी निषेध किया गया है। उसमें यह साफ तौर पर वर्णित है कि यज्ञ में जिन कुत्ते या गाय आदि पशुओं की बलि दी जाती है वह मूर्खता का काम है।[14] अथर्ववेद (6.120.1) में यह कहा गया है की माता-पिता की सुख शांति तथा उनके दीर्घ जीवन हेतु पितृ यज्ञ करें। यदि माता-पिता को कोई कष्ट देता है तो वह दुखदायी होगा एवं उसे प्रायश्चित का अधिकारी बनना पड़ेगा।[15]

ब्राह्मण ग्रंथो में यज्ञ : ऋतु परिवर्तन के समय जो मैषज्य यज्ञ किया जाता है वह दुष्ट तत्वों का नाश करके उसे शुद्ध करते हैं गोपथ 2.1.19 एवं कौषितकि ब्राह्मण (5.1) में मैषज्य यज्ञ का विस्तार से उल्लेख मिलता है[16] प्रकृति के संतुलन को बनाए रखने में यज्ञ बहुत सहायक एवं उपयोगी है।

आरण्यक ग्रंथों में यज्ञ : आरण्यक ग्रंथों में यज्ञ के दार्शनिक स्वरूप का उल्लेख किया गया है। वैदिक यागों के दार्शनिक एवं आध्यात्मिक पक्षों का वर्णन यहां पर प्राप्त होता है। शतपथ,ऐतरेय, गोपथ एवं तांडय आदि ब्राह्मणों में यज्ञ को विष्णु या ब्रह्म का स्वरूप माना गया है।[17] ब्रह्म के स्वरुप का विवेचन करना ही यज्ञ की दार्शनिक व्याख्या है। यही वर्णन आरण्यक ग्रन्थ में किए गए हैं।

उपनिषदों में यज्ञ का स्वरुप : छांदोग्य उपनिषद में कहा गया है की अर्थज्ञान पूर्वक यज्ञ करें। जो कोई भी मंत्रों के अर्थ ज्ञान के बिना ही यज्ञ करता है तो वह आहुति अग्नि में ना डालकर भस्म में डालता है।[18]

कठोपनिषद के पहला अध्याय के प्रथम वल्ली में जो यम एवं नचिकेता का संवाद है उसमें यह बताया गया है कि स्वर्ग को प्राप्त करने का पहला साधन यज्ञ है। यज्ञ की विशेषता बतलाते हुए कठोपनिषद में यह वर्णित है कि- त्रिणाचिकेत अग्नि का तीन बार चयन करने वाला मनुष्य माता-पिता और आचार्य इन तीनों से संबंध को प्राप्त होकर जन्म और मृत्यु को पार कर जाता है तथा ब्रह्म से उत्पन्न हुए ज्ञानवान एवं स्तुति योग्य देव को जानकर और उसे अनुभव कर इस अत्यंत शांति को प्राप्त हो जाता है।[19] उपनिषदों में नित्य, नैमितिक तथा काम्य यज्ञों के बारे में भी बताया गया है। उपनिषदों का अध्ययन करने के पश्चात यह ज्ञात होता है कि ब्राह्मण युग में यज्ञ के अंगों एवं यज्ञ के भेद का

उपनिषदों में प्रत्यक्षत: एवं अप्रत्यक्षत: प्रतीकात्मक अथवा अप्रतीकात्मक मौलिक स्वरुप में उल्लेख मिलते हैं। उपनिषदों में प्राप्त नित्य,नैमितिक एवं काम्य यज्ञ का उल्लेख किया गया है।[20]

नित्य यज्ञ : जिन यज्ञ को नियत रूप से किया जाता है वह नित्य यज्ञ कहलाता है तथा जिसे न किए जाने से पाप लगता है। पंच महायज्ञ का विशेष रूप से उल्लेख इसमें प्राप्त होता है। चातुर्मास्य,अग्निहोत्र, दर्शपौर्णमास ,अग्निष्टोम, आग्रायण पशुबंध आदि यह सभी नित्य यज्ञ कहलाते हैं। उपरोक्त वर्णन में से उपनिषदों में सिर्फ अग्निहोत्र एवं पंच महायज्ञ का विस्तृत रूप में वर्णन किया गया है। बाकी अन्य का उल्लेख मुंडकोपनिषद् एवं वृहदारण्यक उपनिषद में प्राप्त होता है। मुंडकोपनिषद में अग्रायण, दर्शपौर्ण बलिवैश्यदेव, कर्म ,चातुर्मास्य आदि यज्ञों को आवश्यक रूप से करने के लिए कहा गया है। इसमें यह भी कहा गया है कि जो इन यज्ञों को नहीं करते हैं उन्हें सातों लोगों में जो पुण्य मिलने वाला होता है वह पुण्य फल उनका खत्म हो जाता है[21] हुत एवं प्रहुत इन दो पाक यज्ञों को वृहदारण्यक उपनिषद में दर्श एवं पूर्णमास से संबोधित किया गया है। अग्निहोत्र कर्म एवं पंच महायज्ञ उपनिषदों में अपने पूर्व परिप्रेक्ष्य से समानता रखता है।[22]

***पंच महायज्ञ :** पंच महायज्ञ का उल्लेख उपनिषदों में पूर्व वैदिक काल के अनुसार बिना कोई परिवर्तन के ही धर्म के प्रमुख एवं आवश्यक अंग रूप में ही मिलते हैं। कठोपनिषद्, बृहदारण्यक उपनिषद्, कौषितकि उपनिषद में इसके बारे में विस्तृत रूप से वर्णन किया गया है। पंच महायज्ञ की व्याख्या करते हुए वृहदारण्यक उपनिषद में बताया गया है कि यह जो आत्मा है वह संपूर्ण जीवन का लोक है अर्थात भाग्य है। जो अपने पितरों हेतु पिंडदान करता है एवं संतान सुख की अभिलाषा रखता है उससे पितरों का जो मानव को वास स्थान एवं भोजन देता है उसे मनुष्यलोक एवं जो पशुओं को जल तथा तृणादि प्रदान करता है उससे पशु लोक बनता है।[23]

इस तरह से गृहस्थ जीवन के लिए ऋषि यज्ञ,देवयज्ञ, पितृयज्ञ ,पशुयज्ञ एवं अतिथि यज्ञ की तरफ संकेत प्राप्त होता है।

***देवयज्ञ :** देव यज्ञ का विशेष रूप से प्रतिपादन कठोपनिषद में किया गया है। परब्रह्म परमात्मा के निमित्त अपने इष्ट देव की उपासना के लिए जो हवन अग्नि में समर्पित किया जाता है वह देव यज्ञ कहलाता है। गीता में इसका वर्णन करते हुए कहा गया है कि वह परम परमात्मा ही समस्त यज्ञो के आश्रय भूत हैं।(24). नाचिकेत अग्नि के विषय में जानने की अभिलाषा नचिकेता ने अपने दूसरे व में प्रकट की थी क्योंकि अग्नि के प्रसन्न होने पर ही स्वर्ग की प्राप्ति होती है।[25]

ब्रह्म यज्ञ : यह प्रातः कालीन एवं सायंकालीन की जाने वाली ईश्वर उपासना एवं संध्या है। स्वाध्याय को भी ब्रह्म यज्ञ कहा गया है।[26]

पितृ- यज्ञ : अपने माता-पिता गुरुजनों आदि की सेवा सुश्रुषा करना पितृ यज्ञ कहलाता है।[27]

बलिवैश्वदेव यज्ञ : पशु पक्षियों के लिए पकाए हुए भोजन में से कुछ अंश निकलना एवं कुछ अंश अग्नि में समर्पित करना।[28] उसके पश्चात ही भोजन को प्रसाद मानकर ग्रहण करना चाहिए।

अतिथि यज्ञ : यह अतिथि सत्कार है अपने जरुरी कार्य को छोड़कर अतिथि का सत्कार करना चाहिए अन्यथा परिवार की सुख समृद्धि नष्ट हो जाती है।[29]

कल्पसूत्रों में यज्ञ : आचार्य सायण ने कल्प का अर्थ देते हुए कहा है कि जिस ग्रंथों में यज्ञ से संबंधित विधियों का प्रतिपादन किया जाता है उन्हें कल्प कहते हैं। जिसका अभिप्राय यह है कि जिन छोटे एवं बड़े यज्ञों का संपूर्ण विधि विधान के साथ उल्लेख जिन ग्रंथों में हुआ है उन्हें कल्प कहते हैं। सूत्र रुप में लिखे जाने के कारण इन्हें सूत्र कहा जाता है।[30]

कल्प सूत्रों के चार भेद हैं :

1. श्रौत सूत्र 2. गृहय सूत्र 3. धर्म सूत्र 4. शुल्व सूत्र।

ब्राह्मण ग्रंथों में यज्ञ के जिन विधि विधानों का उल्लेख है उसकी समग्रता श्रौतसूत्र एवं गृहय सूत्रों में मिलती है। कल्प सूत्र में ही यह बताया गया है कि कौन से कार्य कौन से यज्ञ में किया जाना चाहिए। प्रत्येक ऋत्विक के क्या कार्य हैं किस मंत्र मंत्र का किस विधि में कहां विनियोग है आरंभ से अंतिम तक संपूर्ण विधि का साफ तौर पर जो

निर्देश दिया गया है वह कल्प सूत्रों में ही है। इसके बिना श्रौत एवं गृहय यज्ञ आदि में एकरूपता आनी असंभव थी। श्रौत सूत्रों में वेदों में प्रतिपादित बड़े यज्ञ याग इष्टियों का विशद् रुप में उल्लेख प्राप्त है। इनमें विशेष रूप से जिन यागों का उल्लेख प्राप्त है वह इस प्रकार है सोमयाग, दर्शपूर्णमास ,राजसूय ,वाजपेय, सौत्रामणी,अश्वमेध आदि। गृहय सूत्रों में गृहस्थ जीवन से संबंधित 16 संस्कारों 5 महायज्ञ 7 पाकयज्ञ, गृह प्रवेश ,गृहनिर्माण, कृषिकर्म एवं पशुपालन आदि से संबंधित यज्ञ की विधियों का वर्णन किया गया है। धार्मिक दृष्टि से इनका अत्यंत महत्व है।

कर्मकांड के दिशानिर्देशक श्रौत सूत्र एवं गृहय सूत्र हैं।[31] कात्यायन या पारस्कर श्रौत सूत्रों में प्रमुख रूप से श्रौत यागों का उल्लेख है। दर्शपूर्णमास याग, अग्न्याधान ,पिंडपितृ-, यज्ञ, दाक्षायण, आग्रायण अग्निहोत्र,पुनराधान आदि का वर्णन भी है। इसके अतिरिक्त वाजपेय यज्ञ ,राजसूय याग , अश्वमेध यज्ञ सर्वमेध ,पितृमेध का भी उल्लेख प्राप्त होता है। गृहयसत्रों का गृहस्थ जीवन से संबंध है इसलिए इसमें गृहस्थ जीवन से संबंधित सारे संस्कारों का संग्रह इनमें प्राप्त होता है अतः यह जीवन के सबसे कीमती समय का यह पथ प्रदर्शक है। इसमें 16 संस्कारों का समावेश है। संस्कार जीवन को परिष्कृत करने की एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है जिसका आधार होने के कारण यह बहुत प्रभावशाली माना जाता है। जिन संस्कारों की संपूर्ण विधियों का वर्णन इनमें प्राप्त है वह समाज एवं राष्ट्र की सांस्कृतिक चेतना के उद्धोषक कहे जाते हैं।

यज्ञ का महत्व : "यज्ञ को शतपथ ब्राह्मण में श्रेष्ठतम कर्म के रूप में बताया गया है।"[32] यज्ञ के विधि विधान का शपथ ब्राह्मण में उल्लेख मिलता है। जगत का पालक एवं रक्षा करने वाला यज्ञ को कहा गया है।[33] प्रतीकात्मक स्वरूप में बाह्य यज्ञ है। यज्ञ आत्माशुद्धि, परिष्कार ,समर्पण एवं परमात्मा की प्राप्ति का साधन माना जाता है। जब तक मनुष्य अपनी वाणी को परिष्कृत करके मन को पवित्र नहीं करता है तब तक वह परमात्मा को प्राप्त करने से वंचित रह जाता है। सत्यवती होना यज्ञ के लिए बहुत आवश्यक है क्योंकि मानव को यही सत्य भाषण ही देवत्व की प्राप्ति करने में सहायक होता है। वैज्ञानिक धार्मिक एवं आध्यात्मिक सभी दृष्टिकोण से यज्ञ का बहुत अधिक महत्व माना जाता है। यह सिर्फ वातावरण को ही परिष्कृत नहीं करता है बल्कि वातावरण से नकारात्मक शक्तियों को भी नष्ट कर देता है और सकारात्मक स्थापित करने में भूमिका निभाता है। मानव के सभी मनोकामनाओं को पूरी करता है। यज्ञ परस्पर प्रेम, सहिष्णुता एवं सहकार की भावना को बढ़ाता है तथा मनुष्य के कल्याण एवं समृद्धि में वृद्धि करता है। यज्ञ के द्वारा जो मंत्र उच्चरित किए जाते हैं वह मंत्र का कंपन एवं यज्ञ में अग्नि देव का उपस्थित होना सकारात्मक शक्तियों को बढ़ाता है जिससे पवित्र एवं देवमय वातावरण उपस्थित हो जाता है। यज्ञ में जो भी मनुष्य भाग लेते हैं उनके अंदर सौहार्दता ,प्रेम एवं शांति का अनुभव होने लगता है जिससे उनके अंदर मौजूद नकारात्मक भावनाएं धीरे-धीरे खत्म होने लगती है। पर्यावरणीय दृष्टिकोण से देखने पर यह ज्ञात होता है कि यज्ञ ओजोन परत को मजबूत बनाने में अत्यंत सहायक है जिसके द्वारा वायुमंडल में संतुलित स्थिति बनी रहती है। स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से यज्ञ की अग्नि से जो धुआं निकलता है उसका औषधि रूप से बहुत प्रभाव होता है जो त्वचा रोग एवं स्वास्थ्य से संबंधित रोगों को ठीक करने में बहुत सहायक सिद्ध होता है सामूहिक जनकल्याण के लिए यज्ञ करना बहुत जरूरी माना जाता है। क्योंकि इन सब के साथ-साथ यज्ञ संस्कृति का संरक्षण करने में भी सहायता करता है। यह आध्यात्मिक प्रथाओं एवं पुरानी सांस्कृतिक प्रथाओं को भी जीवंत रखता है तथा समाज में एकता, भाईचारा ,सहयोग एवं प्रेम की भावना को फैलाता है। यज्ञ के द्वारा मानव अपने संपूर्ण जीवन को सफल बना सकता है इसके द्वारा आध्यात्मिक सुख समृद्धि की भी प्राप्ति संभव है।

निष्कर्ष : इस प्रकार उपरोक्त अध्ययन से यह पता चलता है कि यज्ञ, समर्पण, आत्म शुद्धि एवं ब्रह्म प्राप्ति का साधन है। ब्रह्म ज्ञान एवं ब्रह्म की प्राप्ति करना ही यज्ञ का प्रमुख लक्ष्य है। मन एवं विचारों की पवित्रता तथा वाणी संयम शुद्धि से ही परम परमात्मा को प्राप्त किया जा सकता है। यज्ञ की अग्नि जो प्रदीप होती है वह मनुष्य के अंतःकरण में आत्म ज्योति के प्रदीप्त होने का संकेत देता है। जब वह आत्म ज्योति जागृत हो जाती है तब अज्ञान का जो आवरण है वह धीरे-धीरे हटने लगता है। तत्पश्चात चैतन्य का क्रमशः विकास होता है।

सन्दर्भ :

1. वैदिक साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास (भाग -1), डॉ जयदेव विद्यालंकार, हरियाणा साहित्य अकादमी चण्डीगढ़,1991, पूर्वपीठिका,पृष्ठ सं-1.
2. वही, पृष्ठ -1.
3. वैदिक साहित्य एवं व्याख्या पद्धति की परंपरा, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, पृष्ठ-5.
4. वही, पृष्ठ -5.
5. वैदिक साहित्य एवं संस्कृति, डॉ कपिलदेव द्विवेदी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी,2015, पृष्ठ - 45.
6. वही, पृष्ठ – 53.
7. वही, पृष्ठ- 309.
8. ऋग्वेद - 1/1/6, डॉ गंगा सहाय शर्मा, ऋग्वेद, संस्कृत साहित्य प्रकाशन ,2016, पृष्ठ – 155.
9. वही 1/1/4, पृष्ठ – 155.
10. वैदिक साहित्य एवं संस्कृति, डॉ कपिलदेव द्विवेदी विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी,2015, पृष्ठ – 66..
11. यजुर्वेद ½ , डॉ रेखा व्यास, यजुर्वेद, संस्कृत साहित्य प्रकाशन,2015, पृष्ठ – 31.
12. यजुर्वेद संहिता, संपादकः- पंडित श्री राम शर्मा आचार्य, यजुर्वेद 8/1,पुनर्संस्करण,युग निर्माण योजना विस्तार, गायत्री तपोभूमि मथुरा 2014, पृष्ठ - 7.11.
13. यजुर्वेद संहिता, संपादक - वेदमूर्ति तपोनिष्ठ पं० श्री राम शर्मा आचार्य, भगवती देवी शर्मा, ब्रह्मवर्चस, शांतिकुंज हरिद्वार (उ०प्र०),1993, पृष्ठ – 8.
14. अथर्ववेद - 7.5.5, वैदिक साहित्य एवं संस्कृति , डॉ कपिलदेव द्विवेदी,विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी,2015, पृष्ठ – 312.
15. वही, पृष्ठ – 315.
16. वही, पृष्ठ – 311.
17. यज्ञो वै विष्णुः।(शत01/1/2/13), विष्णुर्वै यज्ञः(ऐत01/15),गोपथ 2/4/6, तांड्य9/6/10.
18. छान्दोग्य उपनिषद 5/24/1, गीता प्रेस गोरखपुर,पृष्ठ- 569.
19. कठोपनिषद् 1/1/17, गीताप्रेस, गोरखपुर, पृष्ठ- 32.
20. उपनिषदों में यज्ञ का स्वरूप, डॉ आशा रानी, संजय प्रकाशन, नई दिल्ली,2023, पृष्ठ – 79.
21. वही, पृष्ठ- 79- 80.
22. वही, पृष्ठ- 80.
23. वही, पृष्ठ- 80.
24. वही, पृष्ठ- 80.
25. वही, पृष्ठ- 80.
26. वैदिक साहित्य एवं संस्कृति, डॉ कपिलदेव द्विवेदी, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, 2015, पृष्ठ – 317.
27. वही, पृष्ठ- 317.
28. वही, पृष्ठ- - 317.
29. वही, पृष्ठ- 317.
30. वही, पृष्ठ- 213.
31. वही, पृष्ठ- 214.
32. यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म।शत01/7/1/5.
33. शत० 9/4/1/11.

•